LEARN GEETA
तस्मात् योगी भवार्जुन

॥ श्रीहरिः ॥
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

गीता परिवार
॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 9: राजविद्याराजगुह्ययोग

2/3 (श्लोक 11-21), शनिवार, 31 अगस्त 2024

विवेचक: गीता विदूषी सौ वंदना जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/cF5oKdj4Cdk

परम तत्त्व की व्यापकता का बोध

आज के विवेचन सत्र का आरम्भ प्रारम्भिक प्रार्थना एवं बहुत सुन्दर दीप प्रज्वलन के साथ हुआ। माता सरस्वती की वन्दना करते हुए, गुरुदेव के चरणों में नतमस्तक होते हुए एवं ज्ञानेश्वर महाराज की कृपा व आशीर्वाद प्राप्त कर आज के नवम अध्याय के मध्यांश के विवेचन का आरम्भ किया गया।

गीता मैया एवं भगवान वेदव्यास जी को भी नमन किया गया, साथ ही श्रद्धा भाव रखते हुए विवेचन श्रवण करने आए श्रोताओं का अभिवादन किया गया।

सन्त ज्ञानेश्वर महाराज ने बाईस वर्ष की अल्पायु में पुणे से चौदह किलोमीटर दूर स्थित तीर्थ क्षेत्र आलन्दी में जब सञ्जीवन समाधि ली थी तब उन्होंने ज्ञानेश्वरी का जो अध्याय अपने सामने खोल कर रखा था यह वही नवम अध्याय है, **राजविद्याराजगुह्ययोग,** इतना महत्त्वपूर्ण यह अध्याय है। वे कहते हैं कि यह अनिर्वाच्य अध्याय है, इसके सिद्धान्तों की गहराई तक बड़े-बड़े लोग भी नहीं पहुँच पाए तो हम तो गुरुदेव के चरणों के आश्रित हैं। ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग का यह त्रिवेणी सङ्गम है। परम पूज्य गुरुजी के जीवन में यह त्रिवेणी धारा प्रस्फुटित होती है और उनके मुखारविन्द से सुने हुए कुछ कण यहाँ प्रस्तुत हैं।

ज्ञान की धारा स्वामी जी के मुखारविन्द से अविरल बहती रहती है और वेदशाला का महान कार्य, श्रीराम मन्दिर निर्माण कार्य, राष्ट्र निर्माण के कार्य में जो अविरल कार्यरत हैं, ऐसे गुरुदेव के ज्ञान की धारा के प्रभाव में भक्ति किस तरह से सम्मिलित हो जाती है पता ही नहीं लगता। अत्यन्त भावपूर्ण, ओजस्वी एवं प्रासादिक वाणी से ऋषिकेश में गीता साधना शिविर में यह अध्याय गुरुदेव के मुखारविन्द से प्रवाहित हुआ है। गुरुदेव के चरणों में नतमस्तक होते हुए शरणागति रखते हुए इस अध्याय की ओर आगे बढ़ते हैं।

सन्त ज्ञानेश्वर महाराज के अद्भुत, अमृत तुल्य शब्द, अन्तरङ्ग को स्पर्श करते हैं, हृदय स्पर्शी होते हैं। वे अपने गुरुदेव की महती गाते हुए कहते हैं:

म्हणोनि साधकां तूं माउली । पिके सारस्वत तुझिया पाउलीं ।
या कारणें मी साउली । न संडीं तुझी।

वे कहते हैं जो साधक होते हैं या शिष्य होते हैं, गुरुदेव उनकी माँ के समान होते हैं। जब शिष्यों के जीवन में गुरुदेव के चरणों का प्रवेश होता है तब साक्षात माँ सरस्वती का भी प्रवेश होता है। भक्ति में ज्ञान का प्रवेश होता है इसलिए ज्ञानेश्वर महाराज अपने गुरुदेव के लिए कहते हैं कि मैं आपके चरणों का आश्रय कभी नहीं छोडूँगा। वे कहते हैं कि मेरे गुरु की अद्भुत कृपा दृष्टि एवं आशीर्वाद सदैव मुझ पर है तभी मैं यह कर पाया अथवा यह उन्होंने ही मेरे द्वारा करवाया है।

इस अद्भुत अध्याय में हमने देखा श्रीभगवान किस प्रकार से अर्जुन को गुह्य बातों का ज्ञान प्रदान करते हैं। वे कहते हैं-

मया ततमिदं(म्) सर्वं(ञ्), जगदव्यक्तमूर्तिना।
मत्स्थानि सर्वभूतानि, न चाहं(न्) तेष्ववस्थितः।।
न च मत्स्थानि भूतानि, पश्य मे योगमैश्वरम्।
भूतभृन्न च भूतस्थो, ममात्मा भूतभावनः।।

श्रीभगवान कहते हैं कि निराकार परमात्मा ने सम्पूर्ण जगत को व्याप्त किया है, सम्पूर्ण जगत परमात्मा में स्थित है। प्रकृति के रूप में परमात्मा इस सृष्टि में उपस्थित हैं परन्तु परम ब्रह्म परमात्मा उससे भी परे हैं। जिस प्रकार सागर से लहर उठती है। लहर उस सागर का अंश है परन्तु लहर सम्पूर्ण सागर नहीं हो सकती है, इसी प्रकार सृष्टि परमात्मा में स्थित है परन्तु परमात्मा उससे भी व्यापक हैं। सम्पूर्ण सृष्टि उनका लीला विलास है और समस्त भूत मात्र के अन्त:करण में परमात्मा स्थित हैं। परमात्मा को पूर्णतया नहीं जानने के कारण इस जगत में साम्प्रदायिकता भी निर्माण हो गई।

निराकार एवं साकार परमात्मा के दो रूप हैं परन्तु किसी एक ही रूप की भक्ति करते हुए हम इस एक रूप को सत्य मानने लगते हैं।

तुकाराम महाराज कहते हैं:

सगुण निर्गुण जयाची ही अंगे।
तोचि आम्हा संगे क्रिडा करी।
अणुरेणियां थोकडा तुका आकाशाएवढा।

वे कहते हैं कि सगुण और निर्गुण दोनों परमात्मा के ही रूप हैं। जो मूर्ति पूजा करते हैं वे निर्गुण निराकार तक नहीं पहुँच पाते एवं जो निराकार भक्ति करते हैं, सगुण भक्ति तक नहीं पहुँच पाते। श्रीभगवान यहाँ बताते हैं कि सगुण और निर्गुण दोनों मेरे ही रूप हैं।

9.11

अवजानन्ति मां(म्) मूढा, मानुषीं(न्) तनुमाश्रितम्।
परं(म्) भावमजानन्तो, मम भूतमहेश्वरम्।।9.11।।

मूर्ख लोग मेरे सम्पूर्ण प्राणियों के महान् ईश्वररूप श्रेष्ठ भाव को न जानते हुए मुझे मनुष्य शरीर के आश्रित मानकर अर्थात् साधारण मनुष्य मानकर (मेरी) अवज्ञा करते हैं।

विवेचन:- यहाँ पर श्रीभगवान कहते हैं कि कुछ लोग मुझे जानते नहीं हैं एवं जानने की इच्छा भी नहीं रखते हैं। कुछ लोग मुझे जानते हैं परन्तु समग्रता से नहीं जानते। विकारों से ग्रसित होने के कारण साम्प्रदायिकता के वशीभूत होकर मुझे छोटा समझते हैं, मुझे समग्रता से नहीं जानते।

परं भावं अजानंता अर्थात्

श्रीभगवान कहते हैं, मूढ़ और अज्ञानी मुझे पूर्ण रूप से नहीं समझ पाते। जब श्रीभगवान मनुष्य का रूप लेकर अवतरित होते हैं, जैसे भगवान श्रीराम, भगवान श्रीकृष्ण तब अज्ञानी लोग उन्हें पूर्ण रूप से नहीं समझ पाते हैं। निराकार गुणातीत परमात्मा को मनुष्य ही मानने लगते हैं अथवा उन्हें सीमित रूप में ही जानते हैं। कुछ लोग केवल मूर्ति में ही श्रीभगवान का अस्तित्व जानते हैं।

श्रीभगवान यहाँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात कहते हैं कि उनका स्वरूप भावपूर्ण है।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि श्रीभगवान को हम भाव से ही जान सकते हैं:

भावबळे आकळे
एरवी नाकळे
करतळी आवळे
तैसा हरी।

इसलिए जो लोग केवल एक सम्प्रदाय को सत्य मानते हैं, वे श्रीभगवान को छोटा समझते हैं, सीमित समझते हैं। साम्प्रदायिकता इसी से निर्माण होती है। कुछ लोग जानते नहीं हैं एवं कुछ लोग मानते भी नहीं है कि इस सृष्टि का कोई नियामक है।

एक किशोर बालक को उसके पिताजी कहते थे कि श्रीभगवान को प्रणाम करके आओ तब वह उनसे तर्क की बात करता था, जैसे आजकल सब कुछ प्रयोगशाला में सिद्ध किया जाता है। परमात्मा के अस्तित्व के लिए स्वीटजरलैण्ड में बहुत बड़ी प्रयोगशाला में प्रयोग किया जा रहा है और परमात्मा को पार्टिकल के रूप में जानने का प्रयास किया जा रहा है।

वह बालक भी सिद्ध करना चाहता था। पिताजी बहुत अच्छे चित्रकार थे। एक दिन पिताजी ने उस बालक के सिरहाने जब वह सोया था, बहुत सुन्दर चित्र पेण्ट करके रखा। सुबह जब उसने उस चित्र को देखा तो पिताजी से कहा कि आपने तो बहुत सुन्दर चित्र बनाया है। पिताजी ने कहा इसे किसी ने नहीं बनाया। बेटा बोला ऐसा कैसे हो सकता है? इतना सुन्दर चित्र है, किसी ने तो बनाया ही होगा। आप ही ने बनाया होगा। तब पिताजी ने उसे समझाया कि यह तो एक चित्र है और उसे किसी ने तो निर्माण किया है। तब इतनी बड़ी सृष्टि है, जिसमें इतने सुन्दर पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, सूरज हैं, तारे हैं, इतनी नदियाँ बहती हैं तो क्या इतनी सुन्दर सृष्टि का कोई निर्माता नहीं होगा?

No creation without creator.

तब उस बालक को ज्ञान हुआ और वह परमात्मा को मानने लगा, सृष्टि कर्त्ता के रूप में पालन कर्त्ता के रूप में।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

येतुलेनि अनामा नाम । मज अक्रियासि कर्म ।
विदेहासि देहधर्म । आरोपिती ॥
मज आकारशून्या आकारु । निरुपाधिका उपचारु ।
मज विधिविवर्जिता व्यवहारु । आचारादिक ॥
मज वर्णहीना वर्णु । गुणातीतासि गुणु ।
मज अचरणा चरणु । अपाणिया पाणी ॥
मज अमेया मान । सर्वगतासी स्थान ।
जैसें सेजेमाजी वन । निदेला देखे ॥
तैसें अश्रवणा श्रोत्र । मज अचक्षूसी नेत्र ।
अगोत्रा गोत्र । अरुपा रुप ॥

श्रीभगवान कहते है कि मेरे निर्गुण स्वरूप पर किसी का ध्यान नही जाता। मुझे अनेक प्रकार के नाम से पुकारते हैं, बहुत सारे

कर्मों से मुझे आरोपित करते हैं पर मेरा कोई वर्ण नहीं है। मैं जब राम के रूप में आता हूँ तो मुझे क्षत्रिय कहते हैं। जब मैं कृष्ण के रूप में आता हूँ तो मुझे एक ग्वाला कहते हैं। मैं गुणातीत हूँ, प्रकृति के त्रिगुणों से परे हूँ, निराकार हूँ। मैं जब अवतरित होता हूँ तब मैं प्रकृति के तीनों गुणों को अधीन करके सृष्टि पर अवतार लेता हूँ। तब मनुष्य जिसके चरण नहीं उसके चरणों की कल्पना करते हैं, जिसके हाथ नहीं इसके हाथों की कल्पना करते हैं और उसके निराकार स्वरूप तक नहीं पहुँच पाते हैं। इस प्रकार का ज्ञान सीमित ज्ञान है।

श्रीभगवान ने जीव, जगत और जगदीश्वर का रहस्य यहाँ पर उजागर कर दिया। अर्जुन को और अर्जुन की पङ्क्ति में बैठने वाले सभी लोगों को श्रीभगवान समग्रता से यह ज्ञान देना चाहते हैं और आगे कहते हैं:-

9.12

मोघाशा मोघकर्माणो, मोघज्ञाना विचेतसः।
राक्षसीमासुरीं(ञ्) चैव, प्रकृतिं(म्) मोहिनीं(म्) श्रिताः।।9.12।।

(जो) आसुरी, राक्षसी और मोहिनी प्रकृति का ही आश्रय लेते हैं, ऐसे अविवेकी मनुष्यों की सब आशाएँ व्यर्थ होती हैं, सब शुभ-कर्म व्यर्थ होते हैं (और) सब ज्ञान व्यर्थ होते हैं अर्थात् जिनकी आशाएँ, कर्म और ज्ञान (समझ) सत्-फल देने वाले नहीं होते।

विवेचन:- तीन प्रकार के लोग होते हैं जो भली-भाँति परमात्मा को नहीं जानते। बहुत ज्ञान अर्जित करते हैं, बहुत आशा, अपेक्षाएँ रखते हैं, कर्म भी बहुत करते हैं परन्तु वह सब व्यर्थ हो जाता है, क्योंकि वह सृष्टि के कल्याण के लिए नहीं होता है।

मोघ अर्थात व्यर्थ। जिस प्रकार हम नमक डाली हुई चाय में मिठास की आशा करते हैं, वह आशा व्यर्थ है इसी प्रकार सृष्टि कर्ता के साथ हमारा क्या सम्बन्ध है इसका ज्ञान नहीं हो और जानने का प्रयत्न भी नहीं किया तो सारी आशाएँ, अपेक्षाएँ व्यर्थ हो जाती हैं। श्रीभगवान कहते हैं कि अर्जुन! लोग कर्म तो बहुत करते हैं परन्तु वे जानते नहीं हैं कि क्या वे कर्म सृष्टि के कल्याण के लिये हैं? इसलिए वे कर्म व्यर्थ हो जाते हैं।

श्रीभगवान ने यहाँ उनके लिए विचेतसा विशेषण उपयोग किया है अर्थात् जो बहुत चञ्चल प्रकृति के होते हैं। क्या कर रहे हैं? पता नहीं, उनके दृष्टिकोण भी स्पष्ट नहीं होते इसलिए ज्ञान तो बहुत सम्पादित कर लेते हैं परन्तु बहुत व्यर्थ हो जाता है। इसी प्रकार कर्म भी बिना जाने लोग करते रहते हैं, जैसे कई-कई समय तक कुछ लोग खड़े ही रहते हैं। कुछ लोग गिनीज बुक में अपना नाम रिकॉर्ड करने के लिए कर्म करते हैं लेकिन उसका सृष्टि के कल्याण में क्या उपयोग है? यह नहीं जानते।

अगर वह किसी बीमार की सेवा करें, किसी को अस्पताल में खाना पहुँचाने जाए तो यह श्रेष्ठ कर्म होगा। कोई रास्ता भी साफ करता है तो वह कर्म सृष्टि के लिए बहुमूल्य होता है। पर्यावरण के लिए किया गया कर्म, जैसे पेड़ लगाना आदि बहुमूल्य होते हैं।

आजकल सोशल मीडिया पर, व्हाट्सएप पर इतना ज्ञान प्रसारित होता रहता है। वह हमारे किसी काम का नहीं होता व्यर्थ होता है।

गुरुदेव कहते हैं कि सामान्य ज्ञान, जैसे क्रिकेट में किसने कितनी सेञ्चुरी बनाई आदि पच्चीस तीस वर्ष की आयु तक ठीक है। स्वामी तेजोमयानन्द जी कहते हैं कि आयु के एक पड़ाव के बाद ज्ञान एवं कर्म ऐसा होना चाहिए जिससे वैराग्य, भक्ति एवं श्रद्धा जगे।

पाँच हजार वर्ष पूर्व श्रीभगवान ने यह ज्ञान अर्जुन को दिया था लेकिन आज भी हम देखते हैं कि कितनी जगह पर बिना कारण युद्ध हो रहे हैं। आर्टिफिशियल इण्टेलिजेंस के माध्यम से कितने दुष्प्रचार किया जा रहे हैं, ये सब कर्म व्यर्थ हैं। ऐसा व्यवहार करने वाले लोग विचेतस लोग हैं।

आगे श्रीभगवान कहते हैं कि अर्जुन! राक्षसी, आसुरी और मोहिनी ऐसे तीन प्रकार के लोग होते हैं।

राक्षसी प्रवृत्ति के लोग दूसरों को कष्ट पहुँचाते हैं। प्रथम अध्याय में जिस प्रकार हम देखेंगे छः प्रकार के लोग होते हैं। दूसरे के घर को आग लगने वाले, दूसरों की सम्पत्ति छीनने वाले, दूसरे की पत्नी के साथ गलत व्यवहार करने वाले, विष देकर मारने वाले, शस्त्र लेकर मारने वाले, आदि। इस प्रकार के सभी गुण कौरवों में उपस्थित हैं। ये आततायी लोग दूसरों को कष्ट पहुँचाते हैं।

बचपन में हमने सुना था कि राक्षस काले रङ्ग के बड़े-बड़े दाँत वाले होते हैं, ऐसा नहीं होता। श्वेत वर्ण वाले क्या सभी लोग अच्छे होते हैं?

हमारे कृष्ण भगवान तो सांवले रङ्ग के ही हैं, इसलिए श्रीभगवान कहते हैं कि केवल ऊपर से रङ्ग नहीं अन्तरङ्ग देखना चाहिए।

दूसरे प्रकार के आसुरी होते हैं। ये लोग बहुत गुणी, विद्यावान कलावान हो सकते हैं परन्तु इस सबका ये दुरुपयोग करते हैं, जिस प्रकार अभी हम कोलकाता में होते हुए देख रहे हैं।

कभी-कभी बड़े-बड़े डॉक्टर किडनी रैकेट चलाते हुए दिखते हैं। क्लब में जाना, बड़ी-बड़ी पार्टियों में जाना, यह इनका सिद्धान्त होता है। गलत सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार करते हैं।

तीसरे होते हैं मोहिनी, अर्थात् तमोगुण वाले आलसी, बिस्तर में पड़े रहने वाले और शराब पीकर जुआ खेलने वाले।

एक कहावत है- **सूरज अस्त गढ़वाल मस्त**।

यहाँ पर विवेचिका जी एक प्रसङ्ग बताती है। उनके जेठ जी ने पूर्वोत्तर भारत में स्थित पर्वतीपुरम में चाय बागान के श्रमिक बच्चों के लिए एक पाठशाला खोली है और कई वर्षों से वहाँ समाज सेवा में लीन हैं। उनके वहाँ जाने से पूर्व सम्पूर्ण गाँव के लोग जो चावल की खेती करते थे, उस चावल को सड़ा कर शराब बनाते थे और शाम होते ही महिला-पुरुष सभी उस शराब के नशे में पड़े रहते थे। इसके अलावा कुछ कल्याणकारी जीवन हो सकता है यह उन्हें पता ही नहीं था। इस प्रकार के तमोगुण प्रधान लोग भी होते हैं।

श्रीभगवान कहते हैं, इस प्रकार राक्षसी, आसुरी, मोहिनी तीनों प्रकार के लोग प्रकृति का आश्रय लेते हैं और अपनी उत्पत्ति बढ़ाते रहते हैं।

श्रीभगवान कहते हैं, परन्तु सभी लोग ऐसे नहीं होते हैं। कुछ लोग अपने जीवन का उन्नयन हो इसके लिए प्रयत्नशील होते हैं। ऐसे लोग दैवी सम्पत्ति वाले होते हैं।

9.13

महात्मानस्तु मां(म्) पार्थ, दैवीं(म्) प्रकृतिमाश्रिताः।
भजन्त्यनन्यमनसो, ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम्।।9.13।।

परन्तु हे पृथानन्दन ! दैवी प्रकृति के आश्रित अनन्य मन वाले महात्मा लोग मुझे सम्पूर्ण प्राणियों का आदि (और) अविनाशी समझकर मेरा भजन करते हैं।

विवेचन:- यहाँ पर श्रीभगवान अर्जुन के लिए पार्थ शब्द का प्रयोग करते हैं। पार्थ अर्थात पृथा का पुत्र। कुन्ती माता का नाम पृथा था। वे योगिनी थीं और कई वर्षों तक तप किया था। तपोमय जीवन जीते हुए उन्होंने अपने बालकों का किस प्रकार से पालन-पोषण किया है, उन्नयन किया है यह हम जानते हैं। दैवी सम्पत्ति युक्त बालकों का विकास किया है।
इसलिए श्रीभगवान यहाँ पर पार्थ शब्द का प्रयोग कर रहे हैं। कभी श्रीभगवान परन्तप कहते हैं, कभी कौन्तेय कहते हैं। श्रीभगवान अर्जुन को अलग-अलग नामों से बुलाते हैं।

श्रीभगवान कहते हैं कि दैवी प्रकृति वाले लोग सभी भूत मात्र को जो सनातन, अव्यय कारण परब्रह्म परमात्मा हैं उनका अंश जानते हैं और अनन्य भाव से उपासना करते रहते हैं। जब तक इस प्रकार के लोग सृष्टि में रहेंगे इसका विनाश नहीं होगा। ऐसे दैवी प्रकृति के लोग प्रकृति के आश्रित होते हुए भी परमात्मा का भजन करते हैं।

श्रीगुरुदेव कहते हैं कि केवल सज्जन लोगों की सङ्गति होना पर्याप्त नहीं है अपितु इस प्रकार के सज्जन लोगों का सङ्गठित होना आवश्यक है।

संघ शक्ति कलियुगे।

सज्जनों का सङ्गठित होना एवं सशक्त होना आवश्यक है जिससे दुर्जनों का सामना किया जा सके।

इस गीता महायज्ञ के साथ गुरुदेव ने इतने बड़े गीता परिवार की स्थापना की है। आदरणीय आशु भैया ने ऑनलाइन गीता संथा वर्ग के साथ ऐसे कितने ही सज्जन लोगों को एकत्रित किया है।

शिवाजी महाराज के समय मुगलों के इतने आक्रमण होते थे, गौ हत्या होती थी, तब श्रीरामदास स्वामी जी ने कहा था-

दास म्हणे रघुनाथाचा गुण घ्यावा।
वे कहते हैं, केवल राम-राम करके कुछ नहीं होगा। हमें श्रीरघुनाथ के गुण अपने अन्दर सङ्क्रमित करने का प्रयत्न करना चाहिए। श्रीभगवान कहते हैं कि अनन्य रूप से भक्ति युक्त सेवा करनी चाहिए। भज् धातु का अर्थ केवल भजन गाना नहीं होता है, सेवा करना भी होता है।

9.14

सततं(ङ्) कीर्तयन्तो मां(यँ), यतन्तश्च दृढव्रताः।
नमस्यन्तश्च मां(म्) भक्त्या, नित्ययुक्ता उपासते॥9.14॥

नित्य- निरन्तर (मुझ में) लगे हुए मनुष्य दृढ़व्रती होकर लगन पूर्वक साधन में लगे हुए और प्रेम पूर्वक कीर्तन करते हुए तथा मुझे नमस्कार करते हुये निरन्तर मेरी उपासना करते हैं।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि जिनके अन्तरङ्ग में परमात्मा की भक्ति जागृत हो गई, ऐसे दृढ़निश्चयी लोग सृष्टि की सेवा करते हुए परमात्मा की सेवा कर रहे हैं, इस भाव से परमात्मा का कीर्तन करते रहते हैं। नाम-गुण गाते रहते हैं। अन्न का एक दाना भी अगर भूमि में बोया गया तो कितना अन्न भूमि हमें देती है।

हर देश में तू, हर वेश में तू, तेरे नाम अनेक तू एक ही है।

ऐसे निरन्तर प्रयत्नशील लोग परमात्मा की आराधना करते रहते हैं और नित्य एक तार परमात्मा से जोड़े रहते हैं।

कीर्तन का अर्थ केवल ठाकुरबाड़ी में, मन्दिर में बैठकर भजन गाते रहना नहीं होता है। गाना तीव्र संवेग है। इससे हमारे

अन्तरङ्ग में संवेदना का निर्माण होता है। परमात्मा की भक्ति निर्मित होती है। हम भक्ति गीत गाते हैं, हम स्तोत्र गाते हैं। कान से तीन प्रकार के संवेग उत्पन्न होते हैं- मृदु, मध्यम और तीव्र।

तीव्र संवेग में परमात्मा के प्रेम में आँसू झर-झर बहते हैं। परमात्मा की कीर्ति हम दिनभर देखते हैं। हम देखते हैं कि जब सूर्योदय होता है तो सारी सृष्टि जैसे जाग उठती है। पक्षी चहचहा उठते हैं, अपना दाना-पानी लेने उड़ने लगते हैं। सारी वनस्पतियाँ भी अन्न बनाने लगती हैं, इस तरह सारी सृष्टि कर्मरत हो जाती है।

तपस्वियों सी हैं अटल ये पवर्तों कि चोटियाँ
ये बर्फ़ की घुमवदार घेरदार घाटियाँ
ध्वजा से ये खड़े हुए
ध्वजा से ये खड़े हुए हैं वृक्ष देवदार के
गलीचे ये गुलाब के, बगीचे ये बहार के
ये किस कवि की कल्पना का चमत्कार है
ये कौन चित्रकार है ये कौन चित्रकार है।

श्रीभगवान कहते हैं, ऐसे लोग इस सृष्टि के चित्रकार के साथ अपना सम्बन्ध निर्माण करने की लालसा से, इस भावना से उनकी कीर्ति गाते हुए कर्मरत रहते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं:

सिया राममय सब जग जानी।
करउँ प्रणाम जोरि जुग पानी।।

सभी स्थानों पर सियाराम देखना ही सर्वोपरि भक्ति है। श्रीभगवान कहते हैं कि अर्जुन इस प्रकार दृढ़निश्चयी लोग सृष्टि कल्याण में कार्यरत रहते हैं।

आगे श्रीभगवान अर्जुन को बताते हैं कि कुछ और प्रकार के लोग भी होते हैं जो अन्य प्रकार से मेरी आराधना करते हैं।

9.15

ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये, यजन्तो मामुपासते।
एकत्वेन पृथक्त्वेन, बहुधा विश्वतोमुखम्।।9.15।।

दूसरे साधक ज्ञान यज्ञ के द्वारा एकीभाव से (अभेद-भाव से) मेरा पूजन करते हुए मेरी उपासना करते हैं और दूसरे भी कई साधक (अपने को) पृथक् मानकर चारों तरफ मुखवाले मेरे विराट रुप की अर्थात् संसार को मेरा विराट रुप मानकर सेव्य-सेवक भाव से (मेरी) अनेक प्रकार से (उपासना करते हैं)।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि अर्जुन कुछ अन्य लोग ज्ञानयज्ञ से मेरी आराधना करते हैं। शास्त्रों का अध्ययन करते हैं। ज्ञान से अपनी बुद्धि को और सूक्ष्म बनाते हैं। परमात्मा सूक्ष्म हैं। जो व्यापक होता है वह सूक्ष्म भी होता है, जैसे वायु व्यापक है तो सूक्ष्म भी है इसलिए व्याप्त है।

www-world wide web internet, से जो तरङ्गें हमारे मोबाइल में, कम्प्यूटर में आती हैं, ये सारी सूक्ष्म होती हैं तभी व्यापक होती हैं। जब तक बुद्धि सूक्ष्म नहीं होगी तब तक परमात्मा का सम्पूर्ण ज्ञान नहीं हो सकेगा, इसलिए इस प्रकार के लोग अविरल ज्ञान यज्ञ करते हैं।

लौकिक ज्ञान यज्ञ करने वाले भी सृष्टि के कल्याण के लिए ही कार्य करते हैं, जिस प्रकार कोरोना की वैक्सीन के लिए काम करने वाले शास्त्रज्ञ सृष्टि की भलाई के लिए ही कार्य कर रहे थे। इस प्रकार से मेरी ही सेवा करते हैं।

आगे श्रीभगवान बताते हैं कि कुछ लोग **एकत्वेन** अर्थात् भिन्न भाव न रखते हुए अर्थात् अद्वैतभाव से मेरी सेवा करते हैं और कुछ लोग **पृथकत्वेन** द्वैत भाव से अर्थात् परमात्मा अंशी हैं और मैं अंश हूँ, इस भाव से मेरी आराधना करते हैं। जिस प्रकार यशोदा माता नन्दलाल की मातृ भाव से सेवा करती है। हनुमान जी दास भाव और अर्जुन सखा भाव के साथ रहते हैं। गोपियाँ श्रीभगवान में स्वामी का भाव देखती हैं, कात्यायनी व्रत करती हैं, इसे माधुर्य भक्ति कहते हैं। सन्त गुलाब राव महाराज ने इसकी प्रतिष्ठापना की है। इसमें परमात्मा और जीव में कोई अन्तर ही नहीं रहता। सारा ब्रह्माण्ड, सारी सृष्टि उस परमात्मा में ही निहित है, इस भाव से उनकी आराधना करते हैं।

एक बार भगवान श्रीराम ने हनुमान जी से प्रश्न पूछा कि हम दोनों का परस्पर क्या सम्बन्ध है? हनुमानजी बुद्धिमानों में सबसे वरिष्ठ हैं। उन्होंने कहा कि भगवान आप किस दृष्टिकोण से मुझसे यह प्रश्न पूछ रहे हैं? मेरा उत्तर उस पर निर्भर करता है।

देहदृष्ट्या दासोऽहम,
जीवदृष्ट्या अंशोऽहम,
आत्मदृष्ट्या त्वमेवाहम् ।

अगर देह भावना से देखूँगा तो मैं आपका दास हूँ, आपकी सेवा में हूँ। जीव की दृष्टि से देखें तो मैं आपका अंश हूँ। आत्म दृष्टि से देखेंगे तो मुझ में और आप में कोई अन्तर नहीं है। आप और मैं एक ही हैं।

इस तरह तीन प्रकार के दृष्टिकोण होते हैं। हम किस प्रकार से देखते हैं, जीवन जीते हैं, उसी प्रकार से परमात्मा के साथ सम्बन्ध प्रस्तावित हो सकता है।

जे ज्ञानगंगा नाहाले।
पूर्णता जेऊनी धाले।
जे शांतीसी आले। पालव नवे।।
जे परिणामा निघाले कोंभ।
जे धैर्य मंडपाचे स्तंभ
जे आनंद समुद्रीं कुंभ
चुबकळोनि भरिले।।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि जो ज्ञान गङ्गा में पूरी तरह नहा लिए हैं, जिन्होंने अन्तरङ्ग पूर्णतया धो लिया है, वे अत्यन्त धैर्यवान होते हैं। सच्चिदानन्द रूपी सागर में जिस प्रकार एक घड़ा डाल दिया जाए तो वह उसी रूप में पूरा भर जाएगा, इसी प्रकार ये लोग होते हैं। इस प्रकार के लोग भी मेरी आराधना करते हैं।

आगे चलकर श्रीभगवान सृष्टि के यज्ञ के बारे में बताते हैं।

9.16

अहं(ङ्) क्रतुरहं(यँ) यज्ञः(स्), स्वधाहमहमौषधम्।
मन्त्रोऽहमहमेवाज्यम्, अहमग्निरहं(म्) हुतम्॥9.16॥

क्रतु मैं हूँ, यज्ञ मैं हूँ, स्वधा मैं हूँ, औषध मैं हूँ, मन्त्र मैं हूँ, घृत मैं हूँ, अग्नि मैं हूँ (और) हवन रूप क्रिया भी मैं हूँ। जानने योग्य पवित्र, ओंकार, ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद भी मैं ही हूँ। इस सम्पूर्ण जगत का पिता, धाता, माता, पितामह, गति, भर्ता, प्रभु, साक्षी, निवास, आश्रय, सुहृद्, उत्पत्ति, प्रलय, स्थान, निधान (भण्डार) (तथा) अविनाशी बीज (भी मैं ही हूँ)। (9.16-9.18)

विवेचन:- यहाँ पर श्रीभगवान कहते हैं, अहं। अहं क्रतु, यज्ञ, अग्नि, स्वथा, हुतम्, मन्त्रं, अर्थात् सब कुछ मैं ही हूँ।

अ से हम वर्णमाला आरम्भ करते हैं और म् पर अन्त होता है। सभी परमात्मा हैं। अ एक स्वर है जिसे बोलते समय हमारा मुँह खुलता है और म् बोलते समय बन्द हो जाता है, सब कुछ इसमें समाहित है।

यज्ञ के भी अनेक प्रकार बताए गए हैं, श्रौत, स्मार्त आदि।

क्रतु (यज्ञ का प्रकार) भी मैं हूँ, ऐसा श्रीभगवान कहते हैं।

यज्ञ में अग्नि की ज्वाला उत्पन्न की जाती है। श्रीभगवान कहते हैं, यह अग्नि मैं ही हूँ। वह ऊपर उठती है और उसमें आहुति दी जाती है। ये दो प्रकार की होती हैं- स्वधा और स्वाहा। स्वधा पितरों के लिए डाली जाती है। अग्नि देवता को वरदान है कि उनको आहुति डाले जाने पर वे पितरों तक और देवताओं तक पहुँचाते हैं। स्वाहा कहते हुए जब सामग्री डाली जाती है तो वह देवताओं तक पहुँचती है। श्रीभगवान कहते हैं कि यह भी मैं ही हूँ। यज्ञ करते हुए कहे जाने वाले मन्त्र भी, श्रीभगवान कहते हैं कि मैं ही हूँ। आहुति डालने के लिए उपयोगी पवित्र शुद्ध घी भी मैं ही हूँ। हवन रूपी क्रिया भी मैं ही हूँ और यज्ञ करने वाला भी मैं ही हूँ।

सृष्टि में जो भी निर्माण कार्य किया जाता है उसमें लगने वाला रॉ मटेरियल (कच्ची समग्री), फॉर्मूला श्रीभगवान ही हैं, जैसे कोयले से या पानी से बिजली निर्माण की जाती है और जिस यन्त्र से वह की जाती है, श्रीभगवान कहते हैं कि वह सब मैं ही हूँ। कोयला सृष्टि में निर्माण होता है, पानी भी हम निर्माण नहीं करते हैं।

यज्ञ में जो आहुति दी जाती है, वह भी परमात्मा हैं। जिसमें दी जाती है, जिसके लिए दी जाती है वे भी परमात्मा ही हैं। हवन प्रक्रिया भी परमात्मा हैं। इस प्रकार की सुन्दर व्यापक दृष्टि श्रीभगवान इस अध्याय के माध्यम से निर्माण करना चाहते हैं।

9.17

पिताहमस्य जगतो, माता धाता पितामहः।
वेद्यं(म्) पवित्रमोङ्कार, ऋक्साम यजुरेव च।।9.17।।

विवेचन:- अब श्रीभगवान कहते हैं, अर्जुन तुम्हारे मन में प्रश्न उत्पन्न होता होगा कि तुम भी मेरे अंश हो, सृष्टि भी मेरा अंश है तो फिर मुझे किसने निर्माण किया?

इस सम्पूर्ण जगत का धाता अर्थात धारण करने वाला मैं ही हूँ। हमें पृथ्वी ने धारण किया हुआ है। पृथ्वी सूर्य के चक्कर लगाती है, धरती को सूर्य ने धारण किया है। सूर्य को ब्रह्माण्ड ने धारण किया है। इस प्रकार यह सृष्टि गुरुत्वाकर्षण के कारण परिक्रमा लगाती रहती है।

यहाँ श्रीभगवान बताते हैं कि इसका निर्माण करने वाला पिता भी मैं ही और माता भी मैं ही हूँ। जन्म देने वाली प्रकृति भी मैं ही हूँ और पिता का पिता अर्थात पितामह भी मैं ही हूँ। श्रीभगवान को किसने निर्माण किया? यह प्रश्न ही निर्माण नहीं होता है। वे स्वयंभू हैं।

Causless cause of world.

ऐसा कहा जाता है कि जिस प्रकार मकड़ी अपना जाल बुनती है और उसी में रहती है, इसी प्रकार परमात्मा इस सृष्टि का निर्माण करते हैं और उसमें रहते हैं परन्तु परमात्मा का निर्माण किसने किया यह प्रश्न ही निर्माण नहीं होता है।

एक होता है **निमित्त** कारण, एक होता है **उपादान** कारण।

जब हम घड़ा देखते हैं तब हम सोचते हैं कि इसे कुम्हार ने बनाया है। कुम्हार निमित्त कारण (**efficient cause)** है। कुम्हार ने घड़ा मिट्टी से बनाया है तो मिट्टी उपादान कारण (**material cause)** है।

यहाँ पर निमित्त कारण भी श्रीभगवान ही हैं और उपादान कारण भी श्रीभगवान ही हैं।

शिव पुराण में एक कथा आती है। शिवजी के विवाह के लिए नारद जी पण्डित बनकर जाते हैं और शिवजी से उनका नाम पूछते हैं तो शिवजी कहते हैं कि शिव। नारद जी उनके पिता का नाम पूछते हैं तो शिवजी कहते हैं विष्णु। नारद जी उनके पिता का नाम अर्थात् शिवजी के दादाजी का नाम पूछते हैं तो शिवजी कहते हैं ब्रह्मा। फिर नारदजी पूछते हैं, उनके पिता का अर्थात परदादा का नाम क्या है? तो शिवजी कहते हैं शिव।
अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, महेश सब कुछ शिव ही हैं। परम तत्त्व एक ही है।

आगे श्रीभगवान कहते हैं कि वेदों का जो निर्माण हुआ है वह भी मुझसे ही हुआ है। ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद। आगे चलकर भगवान वेदव्यास जी ने अथर्ववेद का निर्माण, सृष्टि का जो संविधान है, उन वेदों का विभाजन करते हुए किया।

श्रीभगवान कहते हैं, पवित्र ऊँकार भी मैं ही हूँ। अ,उ,म् अर्थात निर्माता, पालन कर्ता और संहार कर्ता तीनों मैं ही हूँ। यहाँ महत्त्वपूर्ण बात यह है कि श्रीभगवान कह रहे हैं कि वेद्यं अर्थात् जानने योग्य, जिसे जाने बिना यह जीवन समाप्त नहीं होना चाहिए। मनुष्य जीवन योग योनि है, जिसमें परमात्मा के साथ योग हो सकता है, बाकी योनियाँ भोग योनि हैं। मनुष्य जीवन में कुछ तो प्रयत्न करना होगा, गीता जी का अध्ययन करना होगा, कुछ शास्त्रों का अध्ययन करना होगा। समग्रता से नहीं तो कुछ अंश तक परमात्मा से जुड़ने का प्रयत्न करना होगा।

तेजोमयानन्द स्वामी बहुत सुन्दर बात बताते हैं कि जब हम परीक्षा देने जाते हैं तब प्रश्न पत्र में कुछ महत्त्वपूर्ण सूचना लिखी होती है, जैसे प्रथम प्रश्न अनिवार्य है, बाकी प्रश्नों में आप कोई पाँच हल कर सकते हैं। किसी ने यह सूचना नहीं पढ़ी तो वह बाकी पाँच प्रश्न हल करता रहता है और समय समाप्त हो जाता है। वह पहला प्रश्न हल नहीं कर पाता, उसके पहले ही उत्तर पुस्तिका छीन ली जाती है।

इसी प्रकार मनुष्य का जीवन है। सारा ज्ञान जानने में ही मनुष्य का जीवन निकल जाता है परन्तु स्वयं को जाने बिना, सृष्टि कर्ता को जाने बिना, सृष्टि कर्ता के साथ अपना सम्बन्ध जाने बिना ही इस देह की अवधि, कार्यकाल समाप्त हो जाता है।

9.18

गतिर्भर्ता प्रभुः(स्) साक्षी, निवासः(श्) शरणं(म्) सुहृत्।
प्रभवः(फ्) प्रलयः(स्) स्थानं(न्), निधानं(म्) बीजमव्ययम्।।9.18।।

विवेचन:- यहाँ पर सगुण, निर्गुण के प्रतीक शब्द का प्रयोग हुआ है। गति, भरण-पोषण करने वाला प्रभु अर्थात सर्व समर्थ स्वामी, साक्षी अर्थात द्रष्टा के रूप में देखने वाला, रिकॉर्डिंग करने वाला, निवास स्थान एवं शरण में जाने योग्य, ऐसे श्रीभगवान हैं।

श्रीभगवान कहते हैं- **मामेकं शरणम् व्रज।**
अगर कोई भ्रान्ति है, क्या करूँ, क्या न करूँ, किस धर्म का पालन करूँ? तब श्रीभगवान करते हैं कि मेरी शरण में आ जाओ।

श्रीभगवान सुहृद् हैं अर्थात् सभी का कल्याण करने वाले हैं। माँ को भी सुहृद कहा जाता है। प्रति उपकार न चाहने वाले को सुहृद कहते हैं।

माता-पिता, गुरु जन हमसे कोई अपेक्षा नहीं रखते हैं इसलिए उन्हें सुहृद कहते हैं, इसलिए श्रीभगवान कहते हैं कि शरण आने योग्य भी मैं ही हूँ।

प्रभव अर्थात उत्पत्ति, **प्रलय** अर्थात विलय। श्रीभगवान कहते हैं कि उत्पत्ति, प्रलय और स्थिति जिसके द्वारा होती है, जिसका कभी नाश नहीं होगा, ऐसा खजाना जहाँ सब कुछ एकत्रित होता है, वह मैं ही हूँ।

इस देह का नाश होने वाला है परन्तु अविनाशी परमात्मा के साथ हमें सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न करना चाहिए, उनकी शरण में जाना चाहिए।

9.19

तपाम्यहमहं(वँ) वर्षं(न्), निगृह्णाम्युत्सृजामि च।
अमृतं(ञ्) चैव मृत्युश्च, सदसच्चाहमर्जुन॥9.19॥

हे अर्जुन ! (संसार के हित के लिये) मैं (ही) सूर्य रूप से तपता हूँ, मैं (ही) जल को ग्रहण करता हूँ और (फिर उस जल को) (मैं ही) वर्षा रूप से बरसा देता हूँ (और तो क्या कहूँ) अमृत और मृत्यु तथा सत् और असत् (भी) मैं ही हूँ।

विवेचन:- इस श्लोक में श्रीभगवान बताते हैं कि इस सृष्टि का चक्र कैसे चलता है? सूरज के रूप में, मैं ताप देता हूँ, उष्णता निर्माण करता हूँ। फिर मैं पर्जन्य का आकर्षण करता हूँ। सूर्य की गर्मी से पानी भाप बनकर ऊपर जाकर बादल में बदल जाता हैं। श्रीभगवान कहते हैं, मैं उसको आकर्षित करता हूँ और फिर बाद में वर्षा के रूप में उत्सर्जित करता हूँ।

हे अर्जुन! मैं अमृत भी हूँ, अविनाशी भी मैं हूँ और मृत्यु भी मैं ही हूँ। अमरत्व का कारण भी मैं ही हूँ और मृत्यु का कारण भी मैं ही हूँ। बन्धन भी मैं ही हूँ, मोक्ष भी मैं ही हूँ। इस तरह श्रीभगवान यहाँ दोनों प्रकार की बातें कहते हैं इसलिए यह **राजविद्याराजगुह्ययोग** है। मैं सत् भी हूँ और असत् भी हूँ। असत् का अर्थ यहाँ झूठ से नहीं है, असत् अर्थात सूक्ष्म। हम जो इन्द्रियों से जान पाते हैं, उसी को सत्य समझते हैं। उससे परे जो होता है उसे हम असत्य समझते हैं इसलिए हम परमात्मा को भी प्रयोगशाला में सिद्ध करना चाहते हैं।

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

ते तू त्रीजगतीय ओलावा
अक्षर तू सदाशिवा
तुची सत् असत् देवा
तयाचि अतीत ते तू ।

सत्, असत् दोनों ही मुझ में समाये हैं। स्थूल और सूक्ष्म दोनों ही श्रीभगवान में समाए हैं।

आगे श्रीभगवान कहते हैं कि कुछ परमात्मा की आराधना, पूजा करने वाले लोग भी परमात्मा के लिए ये सब नहीं करते, अपितु किसी और हेतु के लिए, भौतिक उन्नति, पद प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए करते हैं और फिर परमात्मा साध्य नहीं साधन हो जाते हैं।

9.20

त्रैविद्या मां(म्) सोमपाः(फ्) पूतपापा,
यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं(म्) प्रार्थयन्ते।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोकम्,
अश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान्।।9.20।।

तीन वेदों में कहे हुए सकाम अनुष्ठान को करने वाले (और) सोमरस को पीने वाले (जो) पाप रहित मनुष्य यज्ञों के द्वारा (इन्द्ररूप

से) मेरा पूजन करके स्वर्ग-प्राप्ति की प्रार्थना करते हैं, वे (पुण्यों के फलस्वरूप) पवित्र इन्द्रलोक को प्राप्त करके (वहाँ) स्वर्ग में देवताओं के दिव्य भोगों को भोगते हैं।

9.21

ते तं(म्) भुक्त्वा स्वर्गलोकं(वँ) विशालं(ङ्),
क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं(वँ) विशन्ति।
एवं(न्) त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना,
गतागतं(ङ्) कामकामा लभन्ते॥9.21॥

वे उस विशाल स्वर्गलोक के (भोगों को) भोगकर पुण्य क्षीण होने पर मृत्युलोक में आ जाते हैं। इस प्रकार तीनों वेदों में कहे हुए सकाम धर्म का आश्रय लिये हुए भोगों की कामना करने वाले मनुष्य आवागमन को प्राप्त होते हैं।

विवेचन:- श्रीभगवान कहते हैं कि तीनों वेदों में जो सकाम आराधना कही गई है वह भी करना आवश्यक है। धर्म का, श्रीमद्भगवद्गीता का आग्रह है कि जीवन समृद्ध होना चाहिए।

निश्रेयस् हेतुर् यः सः धर्मः।

जीवन में अभ्युदय होना ही चाहिए परन्तु उसके लिए नैतिकता खो दी तो आत्मिक शान्ति प्राप्त नहीं होगी। नैतिकता के साथ भौतिक अभ्युदय होना चाहिए।

श्रीभगवान कहते हैं कि इस प्रकार सोम अर्थात वनस्पति का अत्यन्त पुष्ट रस और भोजन ग्रहण करने वाले तीनों वेदो में वर्णित सकाम आराधना करने वाले पाप रहित लोग यज्ञ करके मेरी आराधना तो करते हैं परन्तु मुझे नहीं माँगते, स्वर्ग की कामना करते हैं। इस प्रकार स्वर्ग की प्राप्ति करते हैं, वहाँ निवास करते हैं एवं वहाँ के दिव्य सुख भोगते हैं।

इस प्रकार स्वर्ग लोक में रहते हुए दिव्य भोगों का सुख लेने के बाद पुण्य के क्षीण होने पर पुनः मृत्यु लोक में आते हैं। इस प्रकार तीनों वेदों में बताए गए सकाम आराधना करने वाले लोग कामनाओं की पूर्ति करते रहते हैं, पुन: - पुन: इस मृत्यु लोक में आते-जाते रहते हैं, परन्तु अर्जुन! वे मुझ तक नहीं पहुँच पाते हैं।

इसलिए ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं-

पुण्याची पावती सरे
इंद्र पणाची उटी उतरे ।

पुण्य समाप्त होने पर वे स्वर्ग से धकेले जाते हैं।

जिस प्रकार हम पाँच सितारा होटल में जाते हैं। वहाँ का सुन्दर भोग होता है। उसका स्वाद लेते हुए अगर हम कई दिनों तक वहाँ रुक जाते हैं और हमारा बैंक बैलेंस समाप्त हो जाए तो हमारा सामान भी बाहर फेङ्का जाएगा और हमें भी वहाँ से धकेला जाएगा।

इसी प्रकार वे धकेले जाते हैं और परमात्मा को प्राप्त नहीं कर पाते।
परमात्मा तक कौन पहुँच सकते हैं? श्रीभगवान कहते हैं कि यह भी बताऊँगा और फिर श्रीभगवान की भाषा, ज्ञानमय भाषा, रहस्यमय भाषा से अचानक भावमय भाषा, भक्तिमय भाषा बन जाती है। कौन परमात्मा तक पहुँच पाते हैं? इसका विवेचन अगले भाग में किया जाएगा।

सन्त श्री ज्ञानेश्वर महाराज एवं श्रीगुरुदेव के चरणों में वन्दन करते हुए आज के अति सुन्दर विवेचन का समापन किया गया और प्रश्नोत्तर सत्र आरम्भ हुआ।

प्रश्नोत्तर:

प्रश्नकर्ता: सुषमा पाण्डा जी
प्रश्न: इस अध्याय के श्लोक क्रमाङ्क इक्कीस और अध्याय पन्द्रह के श्लोक:

न तद्भासयते सूर्यो, न शशाङ्को न पावकः।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते, तद्धाम परमं(म्) मम॥

की व्याख्या में विरोधाभास दिखाई देता है। कृपया स्पष्ट करें?
उत्तर: इस श्लोक से पूर्व श्रीभगवान यह भी कहते हैं:

निर्मानमोहा जितसङ्गःदोषा, अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः(स्) सुखदुःखसञ्ज्ञैः(र्), गच्छन्त्यमूढाः(फ्) पदमव्ययं(न्) तत्॥
अर्थात् जो मान और मोह से रहित हो गये हैं, जिन्होंने आसक्ति से होने वाले दोषों को जीत लिया है, जो नित्य-निरन्तर परमात्मा में ही लगे हुए हैं, जो सम्पूर्ण कामनाओं से रहित हो गये हैं, जो सुख-दुःख नाम वाले द्वन्द्वों से मुक्त हो गये हैं, ऐसे मोह रहित साधक भक्त उस अविनाशी परमपद (परमात्मा) को प्राप्त होते हैं। उस (परमपद) को न सूर्य, न चन्द्र (और) न अग्नि ही प्रकाशित कर सकती है और जिसको प्राप्त होकर जीव लौट कर (संसार में) नहीं आते, वही मेरा परम धाम है। ऐसे मनुष्य जीवन में फिर से भोग भोगने नहीं बल्कि परमात्मा के दूत बन कर आते हैं। मनुष्य जीवन में अगर आते हैं तो किसी बन्धन में नहीं बँधते हैं।

इस अध्याय में श्रीभगवान ने यही कहा है कि पुण्य कर्म करने वाले स्वर्ग लोक तक तो पहुँचते हैं पर मुझे प्राप्त नहीं करते। वे उस विशाल स्वर्गलोक को (भोगों को) भोगकर पुण्य क्षीण होने पर मृत्युलोक में आ जाते हैं। इस प्रकार तीनों वेदों में कहे हुए सकाम धर्म का आश्रय लिये हुए भोगों की कामना करने वाले मनुष्य आवागमन को प्राप्त होते हैं, इसलिए उन्हें फिर से जन्म लेकर इस संसार में आना पड़ता है। जहाँ मेरा परम धाम है वहाँ जो जाते हैं, ऐसे मनुष्य जीवन में फिर से भोग भोगने नहीं बल्कि परमात्मा के दूत बन कर आते हैं। मनुष्य जीवन में अगर आते हैं तो किसी बन्धन में नहीं बँधते हैं।

प्रश्नकर्ता: सुमन रस्तोगी जी
प्रश्न: हमारी भक्ति किस तरह की है? यह हम कैसे जान पाएँगे?
उत्तर: इसके लिए तो आपको स्वयं से स्वयं को परखना होगा। अगर आप निःस्वार्थ भाव से परमात्मा से जुड़कर दिनभर कार्य करते हैं तो आपकी भक्ति सर्वोपरि भक्ति की श्रेणी में आती है। ऐसी भक्ति में शरीर तो सृष्टि के कार्यों में रत रहता है लेकिन मन परमात्मा से एकाकार होता है। ऐसी भक्ति को सर्वोपरि अनन्यता की भक्ति कहा जाता है। आपकी भक्ति सगुण, साकार की भक्ति है या निर्गुण, निराकार की, इस पर भी आपको ध्यान देने की आवश्यकता नहीं है। आपके अन्तरङ्ग में वह जिस भी रूप में प्रस्फुटित हो रही है आपको वहीं अपनी एकाग्रता रखनी है। सगुण और निर्गुण को एक ही स्वरूप जानते हुए ही आप परमात्मा की सर्वोपरि भक्ति के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं। ऐसी भक्ति को ज्ञानोत्तर भक्ति भी कहा जाता है। परमात्मा का ज्ञान प्राप्त होने के बाद की भक्ति ही सर्वोपरि भक्ति होती है।

ठाकुर रामकृष्ण देव जी का एक बहुत सुन्दर प्रसङ्ग है कि उनके दो शिष्य जो कि क्रमशः सगुण और निर्गुण भक्ति करने वाले थे, में परस्पर एक बार अपनी-अपनी उपासना पद्धति की विशेषता को लेकर झगड़ा हो गया और वे ठाकुर जी के पास अपना झगड़ा मिटाने के लिए आए। ठाकुर जी ने उनसे प्रश्न किया कि क्या उनके सगुण परमात्मा निर्गुण रूप और क्या निर्गुण परमात्मा सगुण रूप धारण कर सकते हैं? तो दोनों ने इस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक दिया क्योंकि उनका कहना था कि परमात्मा तो सर्वश्रेष्ठ हैं और कोई भी रूप धारण कर सकते हैं। तब ठाकुर रामकृष्ण जी ने उन्हें कहा कि यद्यपि आपको ऐसा ज्ञात है तो फिर झगड़ा किस बात का?

सगुण निर्गुण जयाची ही अंगे।
तो चि आम्हा संगे क्रीड़ा करी।।

हम भी अपने जीवन में जब इस बात को अच्छे से समझ जाएँगे कि परमात्मा का निर्गुण और सगुण रूप एक ही है तब परमात्मा की भक्ति के पथ पर अग्रसर हो जाएँगे और साम्प्रदायिकता से ऊपर उठ सकेंगे।

प्रश्नकर्ता: प्रेम नामदेव जी
प्रश्न: विध्वंसकारी शक्तियों ने हमारे मन्दिरों को तोड़ा तो श्रीभगवान ने मन्दिरों को बचाया क्यों नहीं?
उत्तर: इसको एक उदाहरण से समझते हैं, जिस प्रकार विद्युत को अभिव्यक्ति के लिए उपकरण चाहिए। इसी प्रकार निर्गुण, निराकार परमात्मा की शक्ति सगुण माध्यम से ही प्रवाहित होती है। जब आसुरी प्रवृत्ति के लोग अपनी उपासना पद्धति को अधिक महत्त्व देते हुए विनाशकारी प्रदर्शन करते हैं तो श्रीभगवान किसी न किसी साकार माध्यम से फिर से प्रतिष्ठित होते हैं। जैसे हमने देखा कि राम मन्दिर के निर्माण से पूर्व तीन लाख के करीब लोग वीरगति को प्राप्त हुए और इतने सङ्घर्ष के बाद हमारे परम पूज्य गुरुदेवजी के महत्त्वपूर्ण सहयोग से राम मन्दिर का निर्माण हुआ क्योंकि ऐसा कहा जाता है:

संघे शक्तिः कलौ युगे

जहाँ कहीं भी कोई संगठनात्मक कार्य हो रहा हो, किसी एक ध्येय की प्राप्ति के लिए लोगों का समूह काम कर रहा हो, वहाँ समूह के सभी व्यक्तियों में आपसी एकजुटता अत्यावश्यक है। परम पूज्य स्वामी जी कहते हैं कि अगर महाभारत को पढ़ना है तो भगवान कृष्ण और अर्जुन के जीवन के आलोक में ही पढ़ना होगा और सीखना होगा तभी हमें समझ में आएगा कि अन्याय के साथ लड़ना भी अहिंसा है। हमारे सनातन धर्म के व्यापक दृष्टिकोण अनुसार ऐसा माना जाता है:

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरितासउद्भिदः।

ज्ञानेश्वर महाराज जी भी कहते हैं:

हे विश्वची माझे घर'।

लेकिन अब हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि इस व्यापक दृष्टिकोण मात्र से हमारी सहायता अथवा कल्याण नहीं होगा। हमें अन्याय का प्रतिकार भी करना होगा।

प्रश्नकर्ता: सुलोचना जी
प्रश्न: प्रत्येक मनुष्य में यदि श्रीभगवान विद्यमान हैं तो फिर अपराध का अस्तित्व क्यों है?
उत्तर: अर्जुन हैं तो दुर्योधन और दुःशासन भी अर्जुन के सामने हैं। अगर आपके हीरे की अङ्गूठी साफ पानी के तालाब में गिर जाती है तो आप उसको आसानी से ढूँढ पाते हैं लेकिन अगर वही अङ्गूठी कीचड़ से भरे तालाब में डूब जाती है तो उसको ढूँढ पाना असम्भव हो जाता है। इसी प्रकार हमारे अन्दर का आत्म तत्त्व जब विकारों के ढ़क जाता है तो हमें अपना वास्तविक स्वरूप भी समझ नहीं आता और हम अपराधों की ओर बढ़ने लगते हैं। विकारों के आवरण को हटाकर जहाँ भी हमें परमात्मा दिखाई दें वहीं पर पूर्णतया एकाग्र हो जाना हमारे जीवन के उन्नयन के लिए आवश्यक है।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!

हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !

संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!

Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||

||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||